तात्पर्य

ऐसे अनेक कपट-ध्यानी और व्यावसायिक मनुष्य हैं, जो मिथ्या रूप से अपने को उच्चकुलीन तथा परमार्थ के लिए पूर्ण त्याग करने वाला बताते हैं। श्रीकृष्ण की इच्छा है कि मिथ्याचार करने की अपेक्षा अर्जुन क्षत्रियोचित स्वधर्म का ही अनुशीलन (सेवन) करे। अर्जुन गृहस्थ एवं सेनापति है। अतः उसके लिए यथास्थिति बने रहकर गृहस्थ क्षत्रिय के स्वधर्म का अनुसरण करना अधिक श्रेयस्कर होगा। स्वधर्म का आचरण विषयी मनुष्य के हृदय का शनैः-शनैः परिष्कार करके उसे दोषों से मुक्त कर देता है। जीविका-अर्जन के लिए किए गए तथाकथित त्याग का अनुमोदन श्रीभगवान् अथवा किसी धर्मशास्त्र ने भी नहीं किया है। देह-धारण के लिए कुछ न कुछ कर्म करना अनिवार्य है। अतः हृदय के विषय वासना से शुद्ध हुए बिना कर्म का स्वेच्छापूर्वक त्याग कर देना उचित नहीं। जगत् में प्रत्येक व्यक्ति प्रकृति पर प्रभुत्व करने की अर्थात् इन्द्रियतृप्ति की मलिन प्रवृत्ति से दूषित रहता है। इस प्रकार की दूषित प्रवृत्तियों को दूर करना होगा। स्वधर्म के पालन द्वारा ऐसा किये बिना उस कपट-योगी का रूप कभी न धारण करे, जो कर्म को त्याग कर दूंसरों पर भार बन कर रहता है।

Dmp 5/3

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः।
तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसंगः समाचर।।९।।

यज्ञार्थात्=यज्ञ (विष्णु) के लिए किये जाने वाले; **कर्मणः**=कर्म के अतिरिक्त; **अन्यत्र**=अन्य कर्म; **लोकः**=संसार में; **अयम्**=इस; **कर्मबन्धनः**=कर्मबन्धन होता है; **तत् अर्थम्**=उनके लिए; **कर्म**=कर्म को; **कौन्तेय**=हे अर्जुन; **मुक्तसंगः**=अनासक्त भाव से; **समाचर**=भलीभाँति कर।

अनुवाद

श्रीविष्णु के लिए यज्ञरूप में कर्म करना अनिवार्य है, अन्यथा कर्म से इस प्राकृत-जगत् में बन्धन होता है। इसलिए हे अर्जुन! श्रीविष्णु की प्रसन्नता के लिए कर्म का आचरण कर। इस प्रकार करने से तू नित्य अनासक्त तथा बन्धनमुक्त रहेगा।।९।।

तात्पर्य

केवल शरीर धारण करने के लिए भी कर्म की आवश्यकता को देखते हुए विभिन्न वर्णाश्रमों के लिए स्वधर्मरूप कर्म का विधान किया गया है जिससे उस प्रयोजन की पूर्ति हो सके। **यज्ञ** शब्द भगवान् विष्णु का भी वाचक है। सब यज्ञों का लक्ष्य श्रीविष्णु को प्रसन्न करना है। वेद की वाणी—**यज्ञो वै विष्णुः**, अर्थात् यज्ञ एवं विष्णुभक्ति का लक्ष्य एक ही है। अतएव इस श्लोक से सिद्ध होता है कि कृष्णभावनामृत यज्ञ है। श्रीविष्णु की प्रसन्नता के लिए वर्णाश्रम धर्म का भी यही लक्ष्य है। **वर्णाश्रमाचारवता पुरुषेण परः पुमान् विष्णुराराध्यते।** (विष्णु पुराण ३.८.८) अतएव श्रीविष्णु के सन्तोष के लिए कर्म करना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त, अन्य